International Journal of Sanskrit Research 2018; 4(1): 140-143

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2018; 4(1): 140-143
© 2018 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 07-11-2017
Accepted: 16-12-2017

डॉ0 गीता परिहार
एसोसियेट प्रोफेसर, प्रभारी संस्कृत विभाग, गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स कालेज, मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत

Correspondence
डॉ0 गीता परिहार
एसोसियेट प्रोफेसर, प्रभारी संस्कृत विभाग, गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स कालेज, मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत

वाल्मीकि रामायण में वर्णित सैन्य–संगठन

डॉ0 गीता परिहार

सारांश
प्राचीन भारतीय राजनीतिक – दर्शन में सेना का कितना अधिक महत्व था, यह इस बात से स्पष्ट है कि प्राचीन भारतीय राजनीतिक विचारक इसे राज्य के सात अंगो में से एक मानते रहे हैं। मनुस्मृति में इन सात अंगों को 'सप्तप्रकृति' कहा गया है। आचार्य कौटिल्य ने भी अपने ग्रन्थ 'अर्थशास्त्र में सप्तप्रकृति' का वर्णन इसी रूप में किया है।
वाल्मीकि–रामायण में भी देश–रक्षार्थ सेना की आवश्यकता पर बल दिया गया है। रामायण में यद्यपि राज्य के सप्तांग – सिद्धान्त का एकत्र विवरण प्राप्त नहीं होता, किन्तु रामायणकार ने स्थान–स्थान पर उन विभिन्न अंगों का आवश्यकतानुसार वर्णन अवश्य किया है।
वाल्मीकि – रामायण में अधिकतर स्थलों पर 'सेना' के लिए 'बल' शब्द प्रयुक्त हुआ है। कुछ ही स्थलों पर 'सेना' शब्द का प्रयोग मिलता है। रामायण में सेना के दो रूप मिलते हैं – एक स्थायी व दूसरा अस्थायी। रामायणकार ने सेना के चार स्रोतों का वर्णन किया है –

मित्राटविबलं चैव मौलभृत्यबलं तथा ।
सर्वमेतद् बलं ग्राह्यं वर्जयित्वा द्विषद्बलम् ।[8]

सैन्य–विभाजन की दृष्टि से रामायण युग में चार प्रकार की सेनाओं का वर्णन प्राप्त होता है। पदाति, रथ, अश्व और गज सेना आती थी।
रामायण महाकाव्य में सेना के लिए 'वाहिनी' 'चमू' तथा अक्षौहिणी आदि शब्दों का प्रयोग स्थान–स्थान पर किया गया है। रामायण में सैन्य–संगठन में राजा के बाद सेनापति का स्थान हुआ करता था। सैन्य संगठन की दृष्टि से सर्वोच्च पदाधिकारी सम्भवतः सेनानायक अथवा सेनापति कहा जाता था।
रामायण युग में सैनिक –अनुशासन पर विशेष ध्यान दिया जाता था। रामायणकाल में कठोर सैन्य अनुशासन के साथ–साथ सैनिकों के नियमित वेतन भुगतान और उनकी सुख–सुविधा की ओर पर्याप्त ध्यान दिया जाता था। वर्तमान समय में भी हम देखते हैं कि देश का काफी पैसा देश की रक्षा के लिए सेना पर व्यय किया जाता है।

मूल शब्दः– वाल्मीकि, रामायण, वर्णित, वर्णित, रामायणकाल

प्रस्तावना
प्राचीन भारतीय राजनीतिक – दर्शन में सेना का कितना अधिक महत्व था, यह इस बात से स्पष्ट है कि प्राचीन भारतीय राजनीतिक विचारक इसे राज्य के सात अंगो में से एक मानते रहे हैं। मनुस्मृति में इन सात अंगों को 'सप्तप्रकृति' कहा गया है।

स्वाम्यमात्यो पुरं राष्ट्रं कोशदण्डो सुहत्तथा ।
सप्त प्रकृतयोह्येताः सप्तांगं राज्यमुच्यते ।।[1]

आचार्य कौटिल्य ने भी अपने ग्रन्थ 'अर्थशास्त्र में सप्तप्रकृति' का वर्णन इसी रूप में किया है –

''स्वाम्यमात्यजनपद दुर्ग कोशदण्ड मिश्राणि प्रकृतयः ।''[2]

इन उल्लेखों से यह प्रमाणित होता है कि सेना को राज्य के सप्तांगों में प्रमुख स्थान प्राप्त हैं।
वाल्मीकि–रामायण में भी देश–रक्षार्थ सेना की आवश्यकता पर बल दिया गया है। रामायण में यद्यपि राज्य के सप्तांग – सिद्धान्त का एकत्र विवरण प्राप्त नहीं होता, किन्तु रामायणकार ने स्थान–स्थान पर उन विभिन्न अंगों का आवश्यकतानुसार वर्णन अवश्य किया है।

कहीं– कहीं राज्य के सम्बन्ध में 'प्रकृति' शब्द का प्रयोग भी किया गया है। शब्दकोशों में प्रकृति (प्र + कृ + क्तिन्) शब्द के अनेक अर्थो में एक अर्थ यह भी दिया गया है –– ''राज्य के संविधायी, सात तत्व या अंग –– राजा, मंत्री, मित्रराष्ट्र, कोष, सेना, प्रदेश, गढ़।

अयोध्या–काण्ड के एक सौ छठवें सर्ग में जब श्री राम अपने पिता के 'वचन' के पालनार्थ वनगमन कर जाते हैं और कैकेयी–पुत्र भरत अपनी ननिहाल से वापस आकर वस्तु–स्थिति से अवगत होते हैं तो वे राज्याभिषेक की संपूर्ण तैयारी के साथ श्री राम को वापस लाने के लिए चित्रकूट जाते हैं। वहाँ पहुँचकर राम से अनुनय–विनय करने के उपरान्त वे कहते हैं –

''इहैव त्वाभिषिश्चन्तु सर्वाः प्रकृतयः सह ।''[3]

अयोध्याकाण्ड के ही सोवें सर्ग में 'प्रकृतिमण्डल' शब्द का प्रयोग हुआ है। श्रीराम भरत से राजनीति विषयक विविध प्रश्न करते हुए कहते हैं–

इन्द्रियाणां जयं बुद्ध्वा षाड्गुण्य दैवमानुषम्।
कृत्यं विंशतिवर्गं च तथा प्रकृतिमण्डलम् ।।[4]

इस श्लोक के 'प्रकृतिमण्डल' शब्द का अर्थ टीकाकारों ने भिन्न–भिन्न प्रकार से किया है। किसी के मतानुसार राज्य के पूर्वोक्त सात अंगों को ही इस शब्द में समाहित किया गया है और कुछ के अनुसार मंत्री, राष्ट्र, किला, खजाना और दण्ड (सेना) इन पाँच को ही प्रकृतियों में सम्मिलित किया गया है। राजा और मित्र–तत्व को यहाँ छोड़ दिया गया है।

वाल्मीकि – रामायण में अधिकतर स्थलों पर 'सेना' के लिए 'बल' शब्द प्रयुक्त हुआ है। कुछ ही स्थलों पर 'सेना' शब्द का प्रयोग मिलता है। वैदिक वाड्.मय में 'बल' का अर्थ 'शक्ति' है। सम्भवतः 'शक्ति' के भाव के सन्निहित होने के कारण ही रामायण में सेना के लिए 'बल' शब्द का प्रयोग किया गया है। शब्द–कोश में भी 'बलति बल (प्राणने) + अच् यद्धा बलते' के अनुसार 'बल' का अर्थ 'शक्ति' बताया गया है। 'सेना' शब्द की निष्पत्ति शब्दकोश में 'षिञ् (बन्धने) + न + टाप्' एवं सह इनेन प्रभुणा के रूप में मिलती है, जिसके अनुसार शत्रु को बाँध लेने के कारण अथवा सेनापति के साथ विद्यमान रहने के कारण बल को 'सेना' कहा गया है।

रामायण में सेना के दो रूप मिलते हैं – एक स्थायी व दूसरा अस्थायी राजा अपने राज्य की सुरक्षा की अपेक्षा के अनुपात में स्थायी सेना का संगठन ध्यान से करता था। किसी बाहरी शत्रु के द्वारा अचानक आक्रमण से राज्य की और भीतरी अपराध–अत्याचार से प्रजा की रक्षा के लिए स्थायी सेना का प्रयोग किया जाता था। यथा –

इयमक्षौहिणी सेना यस्याहं पतिरीश्वरः ।
अन्या सहितो गत्वा योद्धाहं तैर्निशाचरैः ।।[5]

यहाँ राजा दशरथ अपनी स्थायी सेना की ओर इंगित कर रहे हैं और अपनी स्थायी सेना को ही राम के साथ भेजने के लिए कहते हैं।[6] अस्थायी सेना से तात्पर्य उस सेना से है जो साधारणतया राजधानी में नहीं रहती थी। आवश्यकता के समय उसे भिन्न–भिन्न स्थानों से बुला लिया जाता था तथा कार्य–समाप्ति पर उसे यथास्थान वापस भेज दिया जाता था। किष्किन्धा काण्ड में सुग्रीव हनुमान् को आदेश देते हैं।[7]

स्रोतों के दृष्टिकोण से रामायणकार ने सेना के चार स्रोतों का वर्णन किया है –

मित्राटविबलं चैव मौलभृत्यबलं तथा ।
सर्वमेतद् बलं ग्राह्यं वर्जयित्वा द्विषद्बलम् ।[8]

सैन्य–विभाजन की दृष्टि से रामायण युग में चार प्रकार की सेनाओं का वर्णन प्राप्त होता है। राजाओं के आश्रय में ये चारों प्रकार की सेनायें रहती थीं, जिसे 'चर्तुरंगिणी नाम से अभिहित किया जाता था। उसके अन्तर्गत पदाति, रथ, अश्व और गज सेना आती थी। महाराज दशरथ के राज्य में चारों प्रकार की सेनाओं का उल्लेख मिलता है।[9] रावण की सेना के लिए भी चर्तुरंगिणी शब्द का प्रयोग किया गया है। हनुमान रावण की सैन्य–शक्ति का वर्णन करते हुए कहते हैं –

नियुतं रक्षसामत्र दक्षिणद्वारमाश्रितम् ।
चतुरंगेण सैन्येन योधास्तत्राप्यनुत्तमाः ।।[10]

इस श्लोक में 'चतुरंगेण' शब्द से स्पष्टतया प्रतीत हो रहा है कि चतुरंगिणी सेना का गठन न केवल आर्य – जातियों के द्वारा किया जाता था, अपितु राक्षस जाति भी वैसा ही करती थी।[11] रामायण–काल में थल–सेना में पूर्वोक्त चार अंगों की ही प्रधानता होती थी।[12] स्थल–सेना आवश्यकता होने पर नावों का प्रयोग कर लेती थी।

चित्रकूट के मार्ग में गंगा के किनारे ठहरी हुई भरत की सेना को देखकर निषादराज ने अपने भाई–बन्धुओं से परामर्श करते हुए कहा – ''हमारे पास पाँच सौं नावें हैं। उनमें से एक–एक नाव पर मल्लाहों के सौ–सौ जवान युद्ध–सामग्री से लैस होकर बैठे रहें।[13] यह बात ध्यान देने योग्य है कि लंका, जो कि चारों ओर समुद्र से घिरी थी, वहाँ भी जल–सेना के रखे जाने का कोई विवरण नहीं मिलता ।

स्थिता पारे समुद्रस्य दूरपारस्य राघव ।
नौपथश्चति नास्त्यत्र निरूद्देशरच सर्वतः ।।[14]

लंकापुरी बहुत दूर तक फैले हुए समुद्र के दक्षिण किनारे पर बसी हुई है। वहाँ जाने के लिए नाव का भी मार्ग नहीं है। रामायण में आज की भाँति स्थायी सेना के रूप में वायुसेना का भी कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता। प्रायः निर्विवाद रूप से यह कहा जा सकता है कि उस काल में थल–सेना का ही स्थायी रूप से गठन किया जाता था।

रामायण–महाकाव्य में सेना के लिए 'वाहिनी', 'चमू' तथा अक्षौहिणी' आदि शब्दों का प्रयोग स्थान–स्थान पर किया गया है।

'अक्षौहिणी' से रामायणकार का क्या आशय है, इसका उल्लेख कहीं नहीं किया गया है। शब्द–कोश में अक्षौहिणी के विषय में लिखा है – अक्षौहिणी में तात्पर्य पूरी चतुरंगिणी सेना से है, जिसमें 21879 रथ, 21870 हाथी, 65610 घोड़े तथा 109350 पदाति हों।[15] महाभारत के आदिपर्व में भी अक्षौहिणी की बिल्कुल यही व्याख्या की गयी है।[16].

रामायण में सैन्य–संगठन में राजा के बाद सेनापति का स्थान हुआ करता था। राजतंत्र में राजा तो सर्वाधिकार सम्पन्न होता ही था। वह न केवल सेना वर्ग अपितु सभी विभागों तथा सभी पदाधिकारियों का प्रधान होता था। केवल सैन्य–संगठन की दृष्टि से सर्वोच्च पदाधिकारी सम्भवतः सेनानायक सेनापति कहा जाता था। अयोध्या– काण्ड के सौवें सर्ग में प्रश्न–शैली में राम भरत से सेनापति के विषय में पूछते हैं –

कच्चिद् धृष्टश्च शूरश्च धृतिमान मतिमाञ्छुचिः ।
कुलीनश्चानुरक्तश्च दक्षः सेनापतिः कृतः ।।[17]

इस प्रश्न से एक संकेत यह भी मिलता है कि राजा के परिवर्तित होने पर राज्य के प्रमुख पदाधिकारी भी बदल जाते थे। सेनापति पद प्राप्त करने वाले पुरूष के लिए यह आवश्यक है कि वह शौर्य सम्पन्न, धैर्यशाली, बुद्धिमान, पूतकामनाओं से परिपूर्ण, उच्चकुलीन एवं रणकर्म– दक्ष हो। संपूर्ण सैन्य–संगठन और सैन्य–संचालन,

जिस पर निर्भर हो उसे असाधारण गुणों और दक्षता से सम्पन्न होना ही चाहिये।

बालकाण्ड के सैंतीसवें सर्ग में प्राप्त विवरण से प्रकट होता है कि देवता लोग भी अपनी सैन्य–व्यवस्था में सेनापति का होना आवश्यक मानते थे। 'रामायणकार ने लिखा है कि जब महादेव जी तपस्या कर रहे थे, उस समय इन्द्र और अग्नि आदि संपूर्ण देवता सेनापति की इच्छा लेकर ब्रह्माजी के पास आये। तब ब्रह्माजी ने उनसे कहा – 'ये हैं उमा की बड़ी बहन आकाश–गंगा, जिनके गर्भ में शंकर जी के तेज को स्थापित करके अग्निदेव एक ऐसे पुत्र को जन्म देंगे, जो देवताओं के शत्रुओं का दमन करने में समर्थ सेनापति होगा।[18]

दशमुख रावण की सैन्य–व्यवस्था के संबंध में युद्धकाण्ड के इक्यानवें सर्ग में प्राप्त उल्लेख से इस बात की पुष्टि होती है कि उसके यहाँ भी स्थायी सेना का बलाध्यक्ष सेनापति होता था अकम्पन के युद्ध भूमि में मारे जाने पर रावण ने अपने प्रधान सेनापति प्रहस्त से कहा –

अहं वा कुम्भकर्णो वा तवां सेनापतिर्मम ।
इन्द्रजिद् वा निकुम्भो वा वहेयुर्भारमीदृशम् ।।[19]

इसी सर्ग में आगे उसी (प्रहस्त) के लिए 'वाहिनीपति' का प्रयोग किया है। रामायणकार लिखते हैं –

एवमुक्त्वा तु भर्तारं रावणं वाहिनीपतिः ।
उवाचेदं बलाध्यक्षान् प्रहस्तः पुरतः स्थितान् ।।[20]

इन शब्द – प्रयोगों से यह निष्कर्ष निकलता है कि स्थायी सेना का प्रमुख नायक राजा के बाद सेनापति होता था किन्तु वही सेनापति जब किसी विशेष युद्ध के लिए प्रेषित सेना की टुकड़ी का नेतृत्व करता था तो उस टुकड़ी के अनुसार वह चमूपति और 'वाहिनीपति' आदि नामों से सम्बोधित किया जाता था। सेनापति के अधीन स्थायी सेनाधिकारी बलाध्यक्ष कहे जाते थे।

इन सैन्य अधिकारियों के क्रमशः क्या अधिकार और कर्तव्य थे, इसका स्पष्ट विवेचन रामायण में कहीं उपलब्ध नहीं है। काव्य में ऐसे विवरणों की अपेक्षा भी नहीं होती। सेनापति के अतिरिक्त सेना के अन्य अधिकारियों तथा सैनिकों की नियुक्तियों की प्रक्रिया का भी कहीं उल्लेख नहीं हुआ है।

रामायण युग में सैनिक – अनुशासन पर विशेष ध्यान दिया जाता था। सेना जब युद्ध के लिए प्रयाण करती थी, तो उसे आदेश दे दिये जाते थे कि वह उस ग्राम तथा नगर में, जिसके पास होकर उसे जाना है, किसी प्रकार का उपद्रव न करे। युद्धकाण्ड के चतुर्थ सर्ग में वर्णित है।[21]

सेना के समुद्र–तट पर पहुँच जाने के उपरान्त श्री राम एक बार पुनः सेना को संयत व नियन्त्रित रहने के लिए आदेश देते हैं।[22] किष्किन्धाकाण्ड में सैतीसवें सर्ग में भी कठोर सैन्य– अनुशासन का स्वरूप देखने को मिलता है। वानर–शिरोमणि सुग्रीव हनुमान् को आज्ञा देते हुए कहते हैं –

'अहोभिर्दशभिये च नागच्छान्ति ममाज्ञया ।
हन्तव्यास्ते दुरात्मनो राजशासनदूषकाः।।[23]

युद्ध के समय तो सैनिकों को अनुशासन का पालन पूर्णतया करना ही होता था। कोई भी सैनिक अपने राजा अथवा नायक के आज्ञानुसार ही युद्ध करता था और बिना आदेश के युद्ध का मैदान नहीं छोड़ता था। युद्धकाण्ड के पचहत्तरवें सर्ग में सुग्रीव ने अपनी सेना के प्रधान–प्रधान वानरों को आज्ञा दी –– तुम लोगों में से जो युद्धभूमि में उपस्थित होकर भी मेरे आदेश का पालन न करें – युद्ध से मुँह मोड़कर याम जाय उसे तुम सब लोगों को पकड़कर मार डालना चाहिए, क्योंकि यह राजा की आज्ञा का उल्लंघन करने वाला होगा।'[24] अनुशासन सम्बन्धी राजा की आज्ञा सामान्य सैनिकों के साथ ही साथ युवराज पर भी लागू होती थी सीता–खोज के कार्य में सफलता न मिलने पर युवराज अंगद ने अपने साथियों से कहा –– ''महाराज सुग्रीव ने जो समय निश्चित किया था, उसके बीत जाने पर हम सबका उपवास करके प्राण त्याग देना ठीक ही जान पड़ता है। सुग्रीव हमारे राजा है, जब हम अपराध करके उनके पास जायेंगे, तब वे हमें कभी क्षमा नहीं करेंगे। सीता का समाचार न पाने पर हमारा वध ही कर डालेंगे। अतः अनुचित वध की अपेक्षा यहीं मर जाना श्रेयस्कर है।[25] राज्य– अनुशासन भंग करने वाले को मृत्यु–दण्ड तक का विधान रामायण में मिलता है।

रामायणकाल में कठोर सैन्य–अनुशासन के साथ–साथ सैनिकों के नियमित वेतन, भुगतान और उनकी सुख–सुविधा की ओर पर्याप्त ध्यान दिया जाता था। उनके कार्यानुसार समुचित वेतन नियमानुसार उचित समय पर देने का उल्लेख हमें रामायण–महाकाव्य के अयोध्याकाण्ड के सौ वें सर्ग में मिलता है। भरत से राम कहते हैं ––

कच्चिद् बलस्य भक्तं च वेतनं च यथोचितम् ।
सम्प्राप्तकालं दातव्यं ददासि न विलम्बसे ।।
कालातिक्रमणे ह्येव भक्तवेतनयोर्भृताः ।
भर्तुरप्यतिकप्यन्ति सोऽनर्थः सुमहान् कृतः ।।[26]

राज्य की रक्षा का भार तो सैनिकों पर ही होता है। वर्तमान समय में भी हम देखते हैं कि देश का काफी पैसा देश की रक्षा के लिये सेना पर व्यय किया जाता है।

रामायणकाल में सैन्य–संगठन के अन्तर्गत ही दुर्गों का भी उल्लेख मिलता है। राज्य की रक्षा में दुर्ग या किले का बहुत योगदान रहता था, क्योंकि राज्य की सेना अपने दुर्गा में छिपे रहकर ही शत्रु की सेना पर आक्रमण करती थी। रामायणकाल में दुर्गो को सुरक्षित बनाने पर विशेष ध्यान दिया जाता था। अयोध्याकाण्ड के सौवें सर्ग में श्रीराम ने भरत से दुर्गो के विषय में भी पूछा –– 'क्या तुम्हारे सभी दुर्ग (किले) धन–धान्य, अस्त्र–शस्त्र, जल, यन्त्र–शिल्पी तथा धनुर्धर – शिल्पियों से भरे – पूरे रहते हैं।[27] महाकवि वाल्मीकि ने युद्धकाण्ड में चार प्रकार के दुर्गो का उल्लेख किया है –

लंका पुर्नर्निरालम्बा देवदुर्गा भयावहा ।
नादेयं पार्वत वान्यं कृत्रिमं च चतुर्विधम् ।।[28]

यहाँ नदी, पर्वत और वन का प्राकृतिक दुर्गो के रूप में उल्लेख किया गया है। जहाँ ये प्राकृतिक दुर्ग नहीं होते थे, वहाँ शत्रु से बचने के लिये दुर्गम चौड़ी गहरी खाई और परकोटों से युक्त कृत्रिम दुर्ग बनवाये जाते थे । दुर्गो की सुरक्षा के लिए लोहे के फाटक लगाये जाते थे और उन पर सैनिको द्वारा निरन्तर पहरे की व्यवस्था की जाती थी।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि वाल्मीकि–रामायण में राज्य की आन्तरिक व्यवस्था और बाह्य आक्रमण से सुरक्षा के लिये सक्षम सैन्य शक्ति के विकास को स्वभावतया बहुत महत्व दिया गया है। स्थायी सेना सुनिश्चित सैन्य–शिविर और दुर्गो में निवास करती हुई आन्तरिक और बाह्य सुरक्षा में लगी रहती थी। सेना के अधिकारियों और सैनिकों की सुख–सुविधा तथा उनके वेतन भत्तों का उचित समय पर भुगतान आदि का पूर्णतया ध्यान रखा जाता था। राज्य की सेना का एक स्थायी प्रधान सेनापति होता था किन्तु युद्ध काल में किसी सुयोग्य व्यक्ति को प्रधान सेनापति का भार सौंपा जाता था, वह स्वयं राजा, उसका भाई, पुत्र तथा मित्र देश का राजा आदि में से होता था। उनकी प्रतिष्ठा को विज्ञापित करने के लिए उनका औपचारिक अभिषेक भी किया जाता था । सैनिकों की मृत्यु के उपरान्त उनके आश्रितों की उचित देखभाल करना राजा का परम कर्तव्य माना जाता था ।

संदर्भ

1. मनुस्मृति – अध्याय 9 – श्लोक 294
2. कौटलीय अर्थशास्त्र – षष्ठ अधिकरण– प्रथम अध्याय– श्लोक।
3. बा0 रामायण – अयोध्या0 – सर्ग 106, श्लोक 26
4. बा0 रामायण – अयोध्या0 – सर्ग 100, श्लोक 69
5. बा0 रामायण – बालकाण्ड – सर्ग 20, श्लोक 3
6. बा0 रामायण – अयोध्या0 – सर्ग 36, श्लोक 2
7. बा0 रामायण – किष्किन्धाकाण्ड – सर्ग 37, श्लोक 1–9
8. बा0 रामायण – युद्धकाण्ड – सर्ग 17, श्लोक 25
9. बा0 रामायण – बालकाण्ड – सर्ग 20, श्लोक 9
10. बा0 रामायण – युद्धकाण्ड – सर्ग 3, श्लोक 25
11. बा0 रामायण – अरण्यकाण्ड – सर्ग 25, श्लोक 23–24
12. बा0 रामायण – युद्धकाण्ड – सर्ग 94, श्लोक 1–3
13. बा0 रामायण – अयोध्या0 – सर्ग 84, श्लोक 8
14. बा0 रामायण – युद्धकाण्ड – सर्ग 3, श्लोक 21
15. संस्कृत हिन्दी शब्द कोश – वामन शिवराम आप्टे, पृ0 5
16. महाभारत आदिपर्व – अध्याय 2, श्लोक 22–26
17. वा0 रामायण – अयोध्या0 – सर्ग 100, श्लोक 30
18. बा0 रामायण – बालकाण्ड – सर्ग 37, श्लोक 7
19. बा0 रामायण – युद्धकाण्ड – सर्ग 57, श्लोक 6
20. बा0 रामायण – युद्धकाण्ड – सर्ग 57, श्लोक 17
21. बा0 रामायण – युद्धकाण्ड – सर्ग 4, श्लोक 38–39
22. बा0 रामायण – युद्धकाण्ड – सर्ग 4, श्लोक 102
23. बा0 रामायण – किष्किन्धाकाण्ड – सर्ग 37, श्लोक 12
24. बा0 रामायण – युद्धकाण्ड – सर्ग 75, श्लोक 43
25. बा0 रामायण – किष्किन्धाकाण्ड – सर्ग 53, श्लोक 13–16
26. वा0 रामायण – अयोध्याकाण्ड – सर्ग 100, श्लोक 32–33
27. वा0 रामायण – अयोध्याकाण्ड – सर्ग 100, श्लोक 53
28. बा0 रामायण – युद्धकाण्ड – सर्ग 3, श्लोक 20